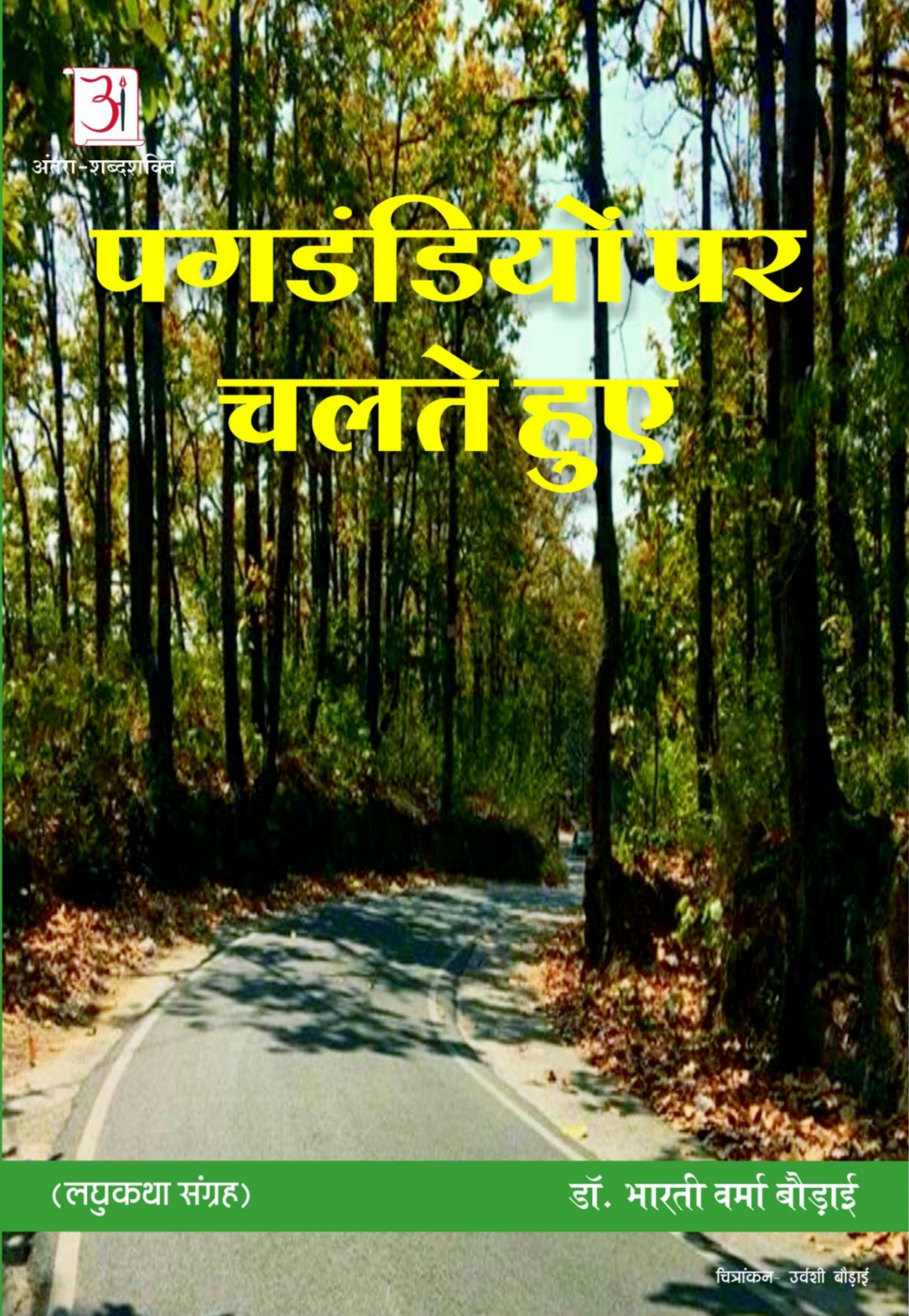

अंतरा-शब्दशक्ति

पगडंडियों पर चलते हुए

(लघुकथा संग्रह)

डॉ. भारती वर्मा बौड़ाई

चित्रांकन- उर्वशी बौड़ाई

पगडंडियों पर चलते हुए

(लघुकथा संग्रह)

(कमलवीथि पुष्प 9)

डॉ भारती वर्मा बौड़ाई

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-86666-11-6

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१

शाखा- एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म.प्र.) ४५२००१

दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९

अणुडाक- antrashabdshkti@gmail.com

अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण २०१८- डॉ भारती वर्मा बौड़ाई

मूल्य - ५५.०० रुपये

आवरण चित्र- उर्वशी बौड़ाई

मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

Pagdandiyon par chalte hue by Dr Bharti Verma Baudai

वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

स्वयं से संवाद

ननिहाल के गौरव अपने सबसे प्यारे नाना जी
स्वर्गीय बलवंत मूसला जी को सादर समर्पित।

अपने जीवन में विचारों की भाव भूमि पर विचरते हुए कई बार मुख्य धारा से भटकती रही हूँ। इसी से अपने मुख्य मार्ग से हट कर पगडंडियों पर भी चलती रही हूँ। तभी काव्य से हटी मेरी लेखनी पगडंडियों पर होने वाले अनुभवों को समेटने के लिए पहले कहानी और उसके बाद लघुकथा के लिए उन्मुख होने लगी। मुझे लगता है जीवन में होने वाली अनुभूतियाँ अपने लिए स्वयं विधा का चुनाव करती हैं। जब वे शब्दों में आकार लेना आरंभ करती हैं तो स्वयं कविता, कहानी, लेख, संस्मरण, यात्रा वृतांत, रिपोर्ताज डायरी आदि में ढलती चली जाती हैं। उस समय रचनाकार के वश में इतना ही होता है कि वह केवल लिखे। विधा तो अनुभूतियाँ स्वयं चुनती हैं अपने लिए।

मुख्य मार्ग पर चलते हुए रह-रह कर पगडंडियों पर जा पहुँचना और उन पर संभल-संभल कर चलने में भी एक अलग ही आनंद मिलता है। उस समय अकेले हों या कोई साथ हो.. यह अधिक मायने नहीं रखता। मायने रखता है तो केवल आनंद... जिसे अनुभव करते हुए एक अलग ही संसार में खोये चले जा रहे हैं और बीच-बीच में कंकड़, पत्थर, काँटे भी चुभ रहे हैं, कई परिचित-अपरिचित मिलते हैं और भावों की कच्ची भूमि तैयार होती रहती है, समृद्ध होती रहती है।

इसी कच्ची तैयार हुई भूमि से विभिन्न विधाओं में आकार लेती हुई शब्दों की फसल लेखनी से निकलती है। भावों की नदी में शब्द बहते जाते हैं, बहते जाते हैं। उनका यह बहना तभी रुकता है जब भावों की नदी उफनते हुए थक कर विश्राम लेने को सोचती है। तब शब्द भी रुकते हैं और लेखनी भी। जन्म लेती हैं बहुत सी रचनायें और किसी एक विधा में ढल कर रचनाकार को सृजन का सुख प्रदान करती हैं जिसके लिए सृजनकर्ता एक असहनीय वेदना के मध्य से पार होकर निकलता है।

वेदना और सृजन का भी तो एक अनूठा सा रिश्ता है। वेदना को जिये बिना कोई भी सृजन संभव नहीं। श्रम,कर्म,त्याग, मौसम के थपेड़े झेलना... ये सब वेदनाओं के ही तो रूप हैं, जिन्हें हम जीते रहते हैं और सृजन के सुख से अपने को समृद्ध करते हैं। अपनी-अपनी रुचियों के अनुसार सबके लिए सृजन के अपने-अपने रंग हैं। इन सभी पसंद-नापसंद के रंगों से ही तो जीवन है। जीवन है तो सब है, इसलिए इसे संभालते हुए चलते रहने में जो अनिर्वचनीय आनंद है..उसकी अनुभूति करते रहिये। स्वभाव भी कुछ ऐसा पाया....

"बने बनाये रास्तों पर कभी चलने की आदत नहीं थी,
कदम बढ़ते गये जंगलों में, पगडंडियाँ बनती गई
सफर जारी रहा.. आज भी सफर में हूँ।"

जब तक जीवन है सफर भी रहेगा और पगडंडियों से मिलना, उन पर चलना भी होता रहेगा। ये रिश्ता टूटने वाला नहीं!

डा० भारती वर्मा बौड़ाई

अनुक्रमणिका

1. इस बार की बारिश 5
2. रक्षाबंधन ऐसा भी 6
3. नीम दोस्त 7
4. नया सवेरा 8
5. पहला पग 9
6. बदला मौसम देर से 10
7. उड़ान 11
8. नयी सोच 12
9. अगर मैं न मानता तो,.? 14
10. बचपन की यारी 15
11. अपना पराया 16
12. आत्मसम्मान 17
13. अचानक 18
14. अनोखा रक्षाबंधन 19
15. अपने हिस्से का काम 19
16. चयन 20
17. सहेली 21
18. सलाह 22
19. पाठशाला 23
20. लूडो 24
21. मिटते फासले 25
22. रंग 25
23. असली श्राद्ध 26
24. हिंदी डे 27
25. आरंभ 27
26. शोर 28
27. विस्फोट 29
28. बचत 30
29. जन्मदिन 31
30. नयी पहचान 32

इस बार की बारिश

पिछले वर्ष की बारिश से दिविका को जिन रिश्तों की सौगात मिली थी उन रिश्तों ने इतनी जल्दी रंग बदलने शुरू कर दिए थे कि वह विश्वास ही नहीं कर पा रही थी। दुल्हन के हाथों की मेहंदी के रंग भी जैसे उससे मुँह चुराने लगे थे।

कहती किससे? ससुराल में कोई अपना न लगता। सास-ससुर, ननदों से भरा-पूरा घर... पर उसके लिए जैसे कोई अपना नहीं।

वह बारिश में बाँहें फैला कर भीगना चाहती, वह परिंदों की तरह उड़ान भरना, अपने मन की उर्वर भूमि पर सपने बोना चाहती, अपने पैरों पर खड़ा होना चाहती थी, पर कोई साथ देने वाला न था।

पति केवल खाने-पीने, इधर-उधर जाकर मौज-मस्ती करने और घर में सोने-लेटे रहने में खुश थे। काम करने से उनका दूर-दूर तक कोई सरोकार न था। दिविका ने कई तरह से समझाने-बताने की कोशिश की, पर कुछ न हुआ। हाँ, आपसी लड़ाई-झगड़े, मारपीट अवश्य अपने रंग दिखाने लगे।

सास-ससुर मूक दर्शक बने रहते। ऐसा लगता जैसे बहू न लाकर घर के लिए कोई नौकरानी लाये हों।

दिविका दिन-दिन जैसे तन और मन दोनों से सूखने लगी। वह काम करना चाहती थी, पर इस मूल्य पर नहीं कि वह घर, काम और बाहर के हर मोर्चे पर खटे और सब उसके दम पर एशो-आराम की जिंदगी उसकी एक तरह से रोज तिल-तिल हत्या करते हुए बितायें।
क्या करे, क्या न करे? लोग-समाज, अपने घर के लोग, संबंधी...क्या कहेंगे सब? वह सोचने लगी.... स्थिति चाहे कोई भी, सबको कुछ न कुछ तो कहना ही होता है, पर अपना साथ तो इंसान स्वयं ही देता है। तो किसी की भी वह परवाह क्यों करे?

काले बादल छाये हुए थे । बारिश कभी भी हो सकती थी। दिविका ने आज सारी चीजें, सारे लोग, संबंधी, मित्र.... सबको दरकिनार करके अपने लिए निर्णय किया कि इस अनचाहे रिश्ते के बंधन वह तोड़ेगी और फिर से अपने जीवन की नई शुरुआत करेगी।
यह निर्णय लेने के बाद वह अपने को तन-मन दोनों से हल्का अनुभव करने लगी। उसे लगा.. इस बार की बारिश उसके सपनों की नई जमीन तैयार करने को उसका साथ देने आ गई है।

दिविका ने अपना स्कूटर उठाया और अपने माता-पिता को अपना निर्णय बताने के लिए चल पड़ी।आज उसे बारिश में भीगना अच्छा लग रहा था।

रक्षाबंधन ऐसा भी

दिशा जब गिरी तब तो उसे कुछ पता नहीं चला कि चोट कहाँ लगी है। पर बाद में जब हाथ उठाने में भयंकर दर्द हुआ तो लगा बाहर से भले ही कुछ नहीं दिख रहा, पर कंधे में जरूर कुछ गड़बड़ हुई है।

जब डाक्टर के सुझाव पर सी टी स्कैन करके देखा गया तो पाया कि माँसपेशियाँ तो बुरी तरह खिंच ही गयी थी, कंधे की हड्डी भी थोड़ी सी टूटी थी।

बेटी को बताया तो वह स्कूल की छुट्टी होते ही दौड़ी चली आई थी। बेटे को बताया तो वह भी घर आने के लिए तुरंत चल पड़ा था। जब डाक्टर ने चौबीस घंटे कंधे को सपोर्ट देने वाली बेल्ट पहनने और हाथ बिलकुल न हिलाने के लिए कह दिया तब से पति तो सारे काम करने में लगे ही थे, पर दोनों बच्चे जिस तरह से जिम्मेदार बन कर छोटी से छोटी दिक्कत, जरूरत को समझ कर आगे से आगे बढ़ कर दूर करने में लगे हुए थे उसे देख कर दिशा को खुशी और गर्व भी हो रहा था साथ ही दुःख भी हो रहा था यह सोच कर कि न जाने कितने दिनों तक के लिए वह सबके लिए परेशानी का का कारण बन गई है।

दिशा को ऐसा लग रहा था कि जिस तरह उसने अपने बच्चों को जन्म देने के बाद पाल-पोस कर बड़ा किया, आज जैसे वही भूमिका बच्चे उसके लिए निभा रहे हैं। आज वह छोटी और बच्चे बड़े हो गये हैं।

कहाँ तो उसने सोचा था कि रक्षाबंधन पर जब बेटा और बेटी अपने पति के साथ आयेंगे तो वह यह बनायेगी, ऐसा करेगी और कहाँ आज उन्हें ही सब करना पड़ रहा है, वह देखने के अलावा कुछ नहीं कर पा रही है।

जब बच्चे राखी बाँध चुके और बोले अब खाना खाते हैं सब, तो दिशा बोली... “थोड़ा सा रुक कर। अभी मेरा राखी बाँधना तो बाकी है।”

“बाकी? मामा तो राखी बँधवा कर चले भी गये।”

“हाँ, वो तो चले गये, पर इतने दिनों से जो मुझ बच्चे की देखभाल में लगे हैं, मेरी हिम्मत बढ़ा रहे हैं, मेरे चारों ओर एक रक्षा सूत्र की तरह तने खड़े हैं, रक्षा कवच बने अपने छोटे हुए भी बड़े बन गये अपने बच्चों के साथ जो मैं नया बंधन अनुभव कर रही हूँ उसे भी तो अपने नाम के अनुरूप दिशा देना चाहती हूँ।”

“तो आओ मेरे बच्चों! अपने-अपने हाथ हाथ आगे बढ़ाओ, ताकि अपनी और तुम्हारी भावनाओं के बंधन को आज एक नये और मजबूत बंधन में बाँध सकूँ।”

बेटी और बेटे के हाथों राखी बाँधते हुए दिशा को एक अनिर्वचनीय सुख की अनुभूति हो रही थी। इस रक्षाबंधन ने सबकी आँखों में खुशी के आँसू ला ही दिये।

नीम दोस्त

पर्यावरण दिवस आने वाला है, सबको पौधे लगाने चाहिए, एक पेड़ काटो तो दस पौधे लगाने चाहिए, काम में आने वाले, स्वास्थ्य ठीक रखने वाले पौधे लगाने चाहिए..... रोज विद्यालय में प्रार्थना से पहले यह बताया जाता था। सुनते-सुनते चीनू ने भी मन ही मन ये सोच लिया कि वो पापा के साथ बाजार जाकर नीम का पौधा लायेगा और अपने घर में लगायेगा।

दो दिन पहले ही चीनू पापा के साथ नर्सरी से नीम का पौधा ले आया। अपनी मम्मी-पापा के साथ मिल कर उसने पौधा अपने घर के एक कोने में लगा दिया।
लगाने के बाद तो चीनू ने पौधे में पानी दिया पर उसके बाद भूल गया। अगले दिन चीनू खेलने के बाद थक कर घर लौटा और पानी पीने लगा तो उसे याद आया कि उसने अपने लगाये नीम के पौधे में पानी तो डाला नहीं। वह भागा बाहर तो देखा कड़कती धूप के कारण उसका पौधा बिलकुल सूखा पड़ा था।

वो रुआँसा हो गया। अब क्या होगा। मेरा पौधा तो सूख गया।मैंने कितनी बड़ी गलती कर दी। इतनी गरमी में खुद तो पानी पीता रहा, पर नीम को पानी देने की बात कैसे भूल गया।
बाहर लगे नल से उसने छोटी बाल्टी में पानी भरा और पौधे के चारों तरफ पानी डालते हुए कहने लगा... "मुझे क्षमा कर दो दोस्त! मैंने तुम्हारा ध्यान नहीं रखा। अब ऐसी गलती न होगी मुझसे।मेरे नीम दोस्त! क्षमा कर दोगे न मुझे।"

अपने सभी काम करने के बाद खाना खाकर वह सो गया। सुबह उठते ही वह अपने पौधे को देखने गया तो उसने देखा उसका नीम अपनी छोटी-छोटी टहनियाँ हिला कर जैसे कह रहा था...."दोस्त! देखो तुमने पानी दिया तो मैं ठीक हो गया।"

चीनू खुशी से पागल हो गया..... "नीम दोस्त! तुमने मुझे क्षमा कर दिया न! अब कभी नहीं भूलूँगा तुम्हें।"

नीम ने भी जैसे अपनी पत्तियाँ हिला कर उसे कहा...."दोस्ती की है तुमसे। इसमें क्षमादान कैसा दोस्त!"

"अब शाम को मिलता हूँ नीम दोस्त!".... कहते हुए चीनू अंदर जाकर अपनी माँ से लिपट गया।

नया सवेरा

आखिर इस वर्ष भी राजबाला दसवीं कक्षा में अनुत्तीर्ण हो गई। यह दूसरी बार हुआ था। विज्ञान विषयों को लेकर ही दसवीं उत्तीर्ण करनी है... माँ की यह जिद थी। इसके चलते राजबाला के दो वर्ष बलिदान हो गए थे। पर माँ जैसे कोई असर ही नहीं था।

“माँ! आज विद्यालय में प्रधानाचार्या ने तुम्हें और बाबू को दस बजे साथ लेकर आने को कहा है।”

“जाना तो पड़ेगा ही, क्योंकि तुमने इतिहास जो रचा है”.. हाथ नचाते हुए माँ तैयार होने लगी।

“अपने बाबू को भी बोला? वही तो हैं तुम्हारे बचाव पक्ष के वक़ील!”

“कह दिया माँ”....कह कर बुझे मन से राजबाला वहीं बैठ गई।

विद्यालय पहुँच कर प्रधानाचार्या से मिलना हुआ। उनका एक बिंदु वाला सुझाव था।

“देखिए.... आप अपनी बेटी की रुचि और योग्यता को समझ ही नहीं रहें हैं। विज्ञान विषयों में उसकी रुचि है ही नहीं। इसीलिए वे उसे कठिन लगते हैं और चाह कर भी आपकी बेटी मेहनत करके भी सफल नहीं हो पा रही है। इधर आपकी ये अकारण जिद बेटी के लिए मुसीबत बन रही है।”

“अब कला विषयों की कोई पूछ तो है नहीं, फिर विज्ञान तो पढ़ना पढ़ेगा न!”

“देखिए! निर्णय आपको करना है।कला विषयों के साथ इस बार परीक्षा दिलवाएँ आप तो मेरी अनुमति होगी, अन्यथा आप स्थानांतरण प्रमाण पत्र ले लें और दूसरे विद्यालय में प्रवेश के लिए प्रयास करें।”

“ये तो कोई बात ना हुई बहन जी! ऐसे कैसे दूसरे विद्यालय में डालें इसे?”

राजबाला कुछ बोलती, इससे पहले ही उसके बाबू ने अपना निर्णय ले लिया और कहा.... “आप सही कह रहीं हैं। इस बार राजबाला कला विषयों को लेकर ही दसवीं की परीक्षा देगी और उत्तीर्ण भी होगी। आपका धन्यवाद हमें सही सुझाव देने के लिए।”

राजबाला को जैसे कोई इच्छित वरदान मिल गया था। आज बाबू ने उसके मन की आवाज को समझ कर सही निर्णय लिया था। नया सवेरा हो गया था।

अब वह नया इतिहास रच कर रहेगी...सोचते हुए वह बाबू के साथ कला विषयों की पुस्तकें खरीदने बाजार चल दी।

पहला पग

पत्नी के प्रसव की तारीख पार हो गई तो श्याम लाल को चिंता होने लगी। सुबह होते ही उसने डॉक्टर से फोन पर बात की। तो उसने अस्पताल में भर्ती होने के लिए कहा।

उसने स्वयं भी नाश्ता किया और पत्नी को भी खिलाया और पत्नी को लेकर अस्पताल पहुँच गया। डॉक्टर ने उसे आश्वासन दिया कि वह एक निश्चित समय तक प्राकृतिक प्रसव करवाने का ही पूरा प्रयास करेगी।

श्याम लाल ने पत्नी को अस्पताल में भर्ती करवा दिया और बैठ कर प्रतीक्षा करने लगा। मंदसौर की घटना के कारण वह बहुत तनाव में था। दिमाग में तरह-तरह की बातें आ रही थी। वहशी दरिंदा रह-रह कर उसे परेशान कर रहा था। पुरुष ही तो वहशी दरिंदा होता है, यदि उसके यहाँ बेटे ने जन्म लिया और बड़ा होकर वह भी ऐसा ही वहशी दरिंदा निकला तो समाज में उसकी नाक तो कटेगी और समाज लड़का कह कर उसे ज्यादा क्या करेगा, दो-चार साल कारागार में डाल देगा, पर उसकी दरिंदगी का शिकार लड़की तो जीते-जी मर जायेगी। तब क्या होगा। समाज तो इन वहशी दरिंदों से वैसे ही भरा हुआ है उसमें एक और बढ़ोतरी...सोचते-सोचते उसका सिर भन्नाने लगा। वह इधर से उधर चहलकदमी करने लगा।

एक ही बात उसके दिमाग में घूम रही थी अगर उसके घर दरिंदा जन्म लेकर आ गया तो....

आखिर डॉक्टर के प्रयास से श्याम लाल की पत्नी का प्राकृतिक प्रसव संभव हो ही गया। पर तनाव तो पीछा छोड़ नहीं रहा था।

जब अस्पताल की नर्स ने आकर बधाई देते हुए कहा..." लीजिए, स्वागत करिए, लक्ष्मी आई है आपके घर!"

सुनते ही श्याम लाल का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा। "आ मेरी लक्ष्मी! मेरी गोद में आ"....कहते हुए उसे गोद में लिया।

श्याम लाल मन ही मन सोचने लगा कि वह आरंभ से ही बेटी का इस तरह पालन-पोषण करेगा, पढ़ाई के साथ संसार से लड़ने को इस तरह समर्थ बनाएगा कि वह ऐसे वहशी दरिंदों को तो सबक सिखा ही सकेगी, साथ ही दूसरों की भी रक्षा करने में समर्थ होगी। मेरी बेटी अबला नहीं, सबला बन कर समाज में जियेगीऔर अपनी पहचान बनाएगी

अब श्याम लाल पूरी तरह तनाव मुक्त हो, बेटी के सबल भविष्य बनाने की तैयारी में पहला पग.. उसके स्वस्थ रहने के लिए डॉक्टर से पूछताछ... रखने को तैयार होने लगा।

बदला मौसम देर से

कई माह से पड़ोसन बीमार चल रही थी। जड़ की पड़ोसन थी वह। मतलब घर की दीवार से लगा हुआ था उसका घर। आमतौर पर जड़ के पड़ोसी कभी मिलकर नहीं रहते। जब-तब शीत युद्ध चलता रहता है, तो यहाँ भी स्थिति कैसे अलग हो सकती थी।

विमला का परिवार बिना कारण तो क्या, कारण पर भी उलझने से पीछे हटता था। पर पड़ोसन और उसका परिवार तो जैसे उलझने के बहाने ढूँढते रहते।

आपके पेड़ों के पत्ते हमारी छत पर गिरते हैं, हमारे घर के आँगन में तो आपके पेड़ों ने छाया कर रखी है, इस पर बैठने वाली चिड़ियाएँ बहुत शोर करती हैं....अंतहीन शिकायतें और अंतहीन व्यर्थ के विवाद।

विमला और उसके पति कभी नहीं उलझते थे। पर एक दिन तो पड़ोसन के पति ने हद ही कर दी। विमला के घर की अपनी तरफ की चारदीवारी तोड़ कर गेट लगा डाला। सदा शांत रहने वाले विमला के पति गरजते हुए बाहर निकले और चिल्ला कर बोले... “इतना साहस बढ़ गया! अभी इस गेट को बंद करता हूँ, फिर लगा कर देख, तब क्या हाल करता हूँ!”

उस दिन के बाद मुखर विवाद तो बंद हो गया, पर सुगबुगाहटें उनकी चलती ही रहती थीं।

यही सब सोचते हुए विमला के मन में द्वंद्व चल रहा था पड़ोसन को देखने जाऊँ या न जाऊँ? जाने पर न जाने वो लोग कैसा व्यवहार करें। अंत में जीत मन की हुई। उसका किया उसके साथ, मेरा किया मेरा साथ जायेगा। जो भी व्यवहार हो उनका , मैं देख ही आऊँगी.... सोच कर विमला उन्हें घर जाकर देख आई। पड़ोसन का दुःख विमला को देख कर बाँध तोड़, बहने लगा। किस तरह घर के सब उसकी उपेक्षा करते हैं.. सब रो-रो कर बताने लगी। विमला भी समझाती, धीर बँधाती रही। सोच रही थी वह... यह कैसी परवशता है कि अपने ही घर में व्यक्ति पराया हो जाता है। दुखी मन से लौट आई थी विमला।

शाम को अचानक दरवाजे की घंटी बजी। दरवाजा खोला तो देखा जड़ की बीमार पड़ोसन अपने घर की बगिया में लगी मूली और पालक लिए खड़ी थी।

“तुम्हारे लिए लाई हूँ। आज ही पका कर खाना.... कहते हुए बैठ गई।” फिर इधर-उधर की, अपनी, अपने मन की, घर की..... खूब बातें करती रही। चलते हुए गले मिल कर बोली.... सारी बातें भूल जा विमला! अपनेपन और प्रेम के यही पल सत्य हैं, यही साथ जाते हैं। तू मन से सारी बातें भुला देना। समझी! अब चलती हूँ। कल भी आऊँगी

और पड़ोसन का वह कल कभी आया ही नहीं। रात में सोये-सोये ही वह परम पिता के पास पहुँच गई थी।

दुखी मन से विमला सोच रही थी कि पड़ोसन के मन का यह मौसम कुछ पहले ही बदल जाता तो वह स्वस्थ देह लिए कुछ ख़ुशियाँ और मन से जी पाती।

शायद अपने जाने के पूर्वाभास से वह विमला के पास अपने मन को स्वच्छ करने आई थी ताकि शांति से वह इस संसार से प्रयाण कर सके।

उड़ान

"चलो यार! मेरे जन्मदिन पर इस बार कुछ नया करते हैं। रिश्तेदारों के साथ केक काट कर रात्रि भोजन करते हुए मन भर गया मेरा तो"- कहते हुए मीना ने रोता सा मुँह बनाया।

"अच्छा, चलो कुछ सोचते हैं"...कहते हुए चारों सहेलियाँ बैठ गईं।

"क्यों न कोई फिल्म देखने चलें?"

"नया करना है तो कुछ और सोचो न!"

तभी विधि बोली..."मीना! तू आज अपने जन्मदिन पर जो कुछ खर्च करना चाहती है, उससे फल, मिठाई, रस, फलों के रस के पेकैट, बिस्किट आदि खरीद ले। वृद्धाश्रम बहुत लोग जाते हैं, चल, इस बार उन्हीं लोगों के बीच जाकर तेरा जन्मदिन मनाते हैं।"

"क्या बढ़िया सोचा विधि ने!"

"चलो तो फिर बाजार चलते हैं।"

सबने मिल कर बहुत सारी चीजें खरीदीं और वृद्धाश्रम पहुँचे।

वहाँ आश्रम के संचालक और संचालिका की सहायता से उन्होंने सभी वृद्ध-वृद्धाओं को वह सामान बाँटा। सबने सिर पर हाथ फेर कर खूब आशीर्वाद दिया। उनकी आँखों में जो खुशी की चमक कौंधती दिखी, वह अवर्णनीय थी। एक संतोष का भाव लिए वे सभी लौटी।

सोने के लिए विधि लेट तो गई, पर नींद तो कोसों दूर थी। उसे बार वृद्धाश्रम के वृद्ध-वृद्धाओं की आँखें याद आ रही थीं।उनमें छिपा अनकहा दर्द, और भी बहुत सी बातें जैसे बाहर निकलने को आतुर थीं। क्या करे,कैसे करूँ... यही सोचते हुए उसे कब नींद आ गई, पता ही नहीं चला।

सुबह उठी तो विधि निश्चिंत थी। उसने तय कर लिया था कि वह सप्ताह में दो दिन वृद्धाश्रम जाया करेगी और उन सबके अंदर जो दर्द का सागर, अनकहा बहुत कुछ बर्फ सा जमा है, थोड़ा सा प्यार पा नदी बन बहने को आतुर है, उसमें मदद करेगी।

शाम को वह पहुँच गई उनके बीच। अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए आश्रम से अनुमति ले ही ली थी। सबको एक गोल घेरे में बिठा कर वह बीच में बैठी। बातों का सिलसिला स्वयं से शुरू कर उन पर छोड़ दिया। अपनी कहने की ललक और खुशी देखते ही बनती थी।

सप्ताह के इन दो दिनों की प्रतीक्षा विधि से ज्यादा अब वहाँ रहने वाले दादा-दादियों, ताऊ-ताइयों, चाचा-चाचियों, मौसा-मौसियों-बुआ-फूफाओं को रहती जो विधि से इन रिश्तों में जुड़ गये थे।

अंदर का जमा दर्द जब निकल कर बह गया तो विधि ने पाया कि उन सबके पास अपने समय का, अपने अनुभवों का इतना भंडार है जो आज की पीढ़ी के लिए ही नहीं, आने वाली पीढ़ियों के लिए भी महत्वपूर्ण होगा, तो बातचीत करके घर आने के बाद वह डायरी में उन्हें लिखने लिखने लगी।धीरे-धीरे उन्हें संपादित कर पुस्तक का रूप दिया और पुस्तक छपवाई।

अपनी चारों सहेलियों, उनके और अपने माता-पिता, सम्बन्धियों, परिचितों, मित्रों के साथ विधि वृद्धाश्रम पहुँची। वहाँ के अपने सभी दादा-दादी, ताऊ-ताई, चाचा-चाची, मौसा-मौसी, बुआ-फूफा आदि के हाथों "उड़ान:दर्द के रिश्तों की" की अपनी सम्पादित पुस्तक का विमोचन करवाया, जिसके वे सभी सहयोगी लेखक थे और पुस्तक उन सभी को समर्पित थी। सबकी आँखों में हर्ष के आँसू थे। दर्द के रिश्तों ने आज मुक्त गगन में उड़ान जो भरी थी।

नयी सोच

कुछ बच्चे खेलने के लालच में विद्यालय जल्दी पहुँच जाते थे। आज जब वे विद्यालय पहुँचे तो उन्होंने देखा कि प्रधानाचार्य महोदय उनसे भी पहले पहुँच कर फावड़ा लिए गड्ढा खोदने में लगे हुए थे। उन्हें बड़ी उत्सुकता होने लगी कि आखिर गुरु जी कर क्या रहे हैं। पूछने का साहस तो नहीं हुआ, पर देखने में लगे रहे। गड्ढा खोदने के बाद उन्होंने अपने कमरे के बाहर मध्यम आकार का एक प्लास्टिक का कूड़ेदान रखा।

अब तो बच्चों की उत्सुकता और बढ़ गई। उन्होंने आपस में सलाह की, कि आज जब भी मौका मिलेगा तो वे गड्ढे और कूड़ेदान को जा-जा कर देखते रहेंगे की गुरु जी ने यह किसलिए किया है।

चार कालांश के बाद जब मध्यांतर हुआ तो साथ लाया खाना खा लेने के बाद वे सब देखने चले... गड्ढे में कुछ है क्या? तो उन्होंने देखा.. गुरु जी ने उसमें केले और सेब के छिलके डालने के बाद, बच्चों के द्वारा जो भी फाड़े-फेंके कागज उन्हें पड़े दिखे,उन्हें उठा कर अपने कमरे के बाहर रखे कूड़ेदान में डाल दिये।

उन्हें बहुत संकोच होने लगा। वे लोग तो केले, संतरे,सेब खा कर विद्यालय के प्रांगण में ऐसे ही फेंक देते हैं, कागजों का कूड़ा भी कितना फैलाते हैं और बड़े गुरु जी को देखो, वे स्वयं उठा कर उन्हें गड्ढे और कूड़ेदान में डाल रहे हैं।

अब से हम भी ऐसा ही करेंगे, और फिर एक ने दूसरे को तो दूसरे ने तीसरे को बताया और सब बच्चों तक यह बात पहुँच गई।

अब क्या था, फलों के छिलके, बचा-खुचा खाना सब गड्ढे में डलने लगा, कागजों का कूड़ा कूड़ेदान में डलने लगा। विद्यालय एकदम साफ-सुथरा दिखायी देने लगा।

प्रधानाचार्य जी इन कामों के लिये बच्चों को कहते-कहते थक गये थे, पर उन पर कोई प्रभाव ही नहीं होता था। तब उन्होंने सोचा कि वे अब प्रार्थना के बाद उपदेशात्मक कुछ नहीं कहेंगे। अपनी इस नयी सोच के तहत उन्होंने किसी को भी बिना कुछ कहे, जो करने की शिक्षा देना चाहते थे, बस वह स्वयं करना आरंभ कर दिया था। जब सार्थक परिणाम दृष्टिगोचर हुआ तब उन्होंने सब बच्चों को विशाल कक्ष में एकत्रित होने को कहा। सभी बच्चों के मन एक खुशी थी की जो उन्होंने बड़े गुरु जी को करते देखा, वही उन सबने भी करना आरंभ कर दिया था।

समय पर बड़े गुरु जी आये। सबसे पहले उन्होंने सबको शाबाशी दी और कहा कि तुम सभी के कारण आज हमारे विद्यालय में कहीं भी कूड़ा नहीं दिखाई देता। पर बच्चों! हमें इतना करके ही रुकना नहीं है। गड्ढे में हम सब जो डाल रहें हैं उससे खाद बनेगी। पाँच-पाँच बच्चे मिलकर एक गमले में एक पौधा लगायेंगे, गड्ढे में बनी खाद उसमें डालेंगे और उसकी देखभाल करेंगे।कूड़ेदान में रोज कागज का जितना भी कूड़ा जमा होगा उसे बोरी में भरते जायेंगे। उसे कबाड़ी को बेच कर जो पैसे मिलेंगे उससे पौधे लाकर लगायेंगे। देखो, जिस तरह हम विद्यालय को साफ रख रहे हैं, उसी तरह अपने घर, आसपास, गली और सड़क को भी साफ रखना है और सबको बताना है। तभी हमारा काम पूरा होगा। बोलो, समझ में आया.... कि हमें क्या करना है?

जी गुरु जी, हम समझ गये कि हमें क्या और कैसे करना हैं। कल हम पाँच-पाँच बच्चों का समूह बना कर उसकी सूची आपको देंगे।

बच्चों का उत्साह और खुशी देख कर प्रधानाचार्य को अनुभव हुआ कि उनकी नयी सोच का प्रकाश चारों ओर फैलने लगा है।

अगर मैं न मानता तो,.?

बड़े उत्साह से शुभम अपने पापा के साथ जाकर पल्सर बाइक लेकर आया था। फिर पापा-मम्मी, दीदी, मामा-मामी, उशी और तशी..इन सबके साथ डाट की देवी जाकर पंडित जी से नई गाड़ी की पूजा करवाई।उसकी खुशी का ठिकाना न था। आखिर मनपसंद बाइक जो मिली थी।

किसी काम से जाने को शुभम निकला। आरती जानती थी कि बच्चे हेल्मेट से पीछा छुड़ाने को तैयार रहते हैं....तो वह हेल्मेट लेकर बाहर भागी। "शुभम! ओ शुभम!.....ये हेल्मेट तो ले। ऐसे नहीं जाने दूँगी मैं तुझे।"

"जानता था मैं कि तुम नहीं मानोगी और हेल्मेट लिए पीछे-पीछे आओगी। लाओ दो अब, तो चलूँ मैं अब?"

"हाँ.... और देख, ज़्यादा तेज़ मत चलाना और जल्दी आना

"ओके मॉम!"...कह कर शुभम निकला और आरती भी अपने काम में लग गई।मन में बेचैनी भी चल रही थी नई बाइक लेकर गया है।

अचानक आए एक फ़ोन कॉल ने जैसे उस बेचैनी को सच कर दिया। बेटे के फ़ोन से किसी व्यक्ति ने फ़ोन कर बताया कि आपके बेटे का ऐक्सिडेंट हो गया है और उसे दून हॉस्पिटल लेकर गए हैं। पति और भाई तो तुरंत ऐक्टिवा लेकर निकल पड़े। आरती माँ-पिता के कारण निकल नहीं पाई पर बदहवास इधर से उधर घूमती रही.....क्या हुआ होगा, कितनी चोट लगी होगी, क्या हाल होगा? क्या करूँ? इसी सोच में उलझी कुछ कर भी नहीं पा रही थी वो। पति का फ़ोन आया कि शुभम तुम्हें बुला रहा है, जल्दी चली आओ।फिर आव देखा न ताव, बस बेटी को साथ ले ऑटो रिक्शॉ से निकल पड़ी। रास्ता आज कितना लंबा लग रहा था कि खत्म होने में नहीं आ रहा रहा था।

हॉस्पिटल के इमर्जेन्सी वार्ड में जैसे ही पहुँची कि शुभम ने उसका हाथ कस कर पकड़ लिया और रोते हुए बोला....."आज तुम्हारे कारण ही मेरा दूसरा जन्म हुआ है माँ। तुम दौड़ कर हेल्मेट देने न आती तो मैं जल्दी में शायद यूँ ही निकल जाता और आज ज़िंदा न बचता। तुम्हारा कहना न मानने के अपराध से शायद मर कर भी उबर नहीं पाता।"

आरती ने उसके मुँह पर हाथ रखते हुए कहा,.."अब बोल मत।" उसके बाद के अड़तालीस घंटे किस तरह बीते थे यह बस भगवान ही जानता है। तीन महीने का बेड रेस्ट भी बीता और वो दिन और आज का दिन,.. शुभम बिना हेल्मेट लिए नहीं निकलता।

उसने तो इसे अब अपना अभियान ही बना लिया है,जहाँ भी बिना हेल्मेट उसे कोई दिख जाता है तो रुक कर हेल्मेट की आवश्यकता- उपयोगिता समझा कर ही आगे बढ़ता है।

बचपन की यारी

"माँ! कल पहुँच रहा हूँ घर। तैयार रहना सब। परसों निकलना होगा हमें।" बेटे के फोन से मन खिल उठा स्मिता का।

कुछ दिन पहले ही तो उसने बताया था कि उसे एक लड़की पसंद है और वो उससे तथा उसके माता-पिता से हमें मिलवाना चाहता है।

अच्छा लग रहा था सोच कर.... बेटा बड़ा और समझदार हो गया है। स्मिता और देव ने सोच लिया था कि बेटे की पसंद ही उनकी भी पसंद होगी। मिलने की तो औपचारिकता होगी बस। इसलिए वे निश्चिंत थे। चलने की सारी तैयारी बेटी ने उत्साह में कर ली थी। आखिर भाभी से मिलने जो रही थी।

बेटे के घर पहुँचते ही नीली तो भाई को छेड़ती ही रही... "कम से कम फोटो तो दिखा ही दो न!

"परसों तो मिल ही रहें हैं न, तब साक्षात् ही देखना। थोड़ा धैर्य रखना भी तो सीखो मेरी नीली-पीली गुड़िया!"

और फिर चारों हवाई जहाज से जयपुर पहुँचे।

शाम को एक होटल में मिलना तय था। निश्चित समय पर वे पहुँचे। लड़की के माता-पिता, लड़की और उसका भाई पहले ही पहुँच चुके थे।

पर, ये क्या? नमस्ते के लिए उठे हाथ उठे ही रह गये। दोनों के मुँह से एक साथ निकला.... तू!

सब हैरान-परेशान! आखिर ये हो क्या रहा है? रहस्य से पर्दा उठाते हुए स्मिता बोली.... "अब इतने भी हैरान मत हों सब लोग। बचपन की यार! आज मिली है। दसवीं पास करने के बाद गौरी के पिता का स्थानांतरण हो गया था। कुछ दिन तो खतो-किताबत चली अपनी, फिर जीवन की आपाधापी में सब छूट गया।"

"और आज मिले हैं अपनी बेटी और बेटे के रिश्ते के लिए... क्या कमाल दिखाया ईश्वर तूने हमें मिलवाने के लिए".....कहते हुए पंखुड़ी ने स्मिता का हाथ प्यार से पकड़ लिया।

फिर तो बचपन की यारी के खट्टे-मीठे अनुभव सुनते हुए कब और कितना समय बीता, किसी को पता न चला।

देखते-देखते बच्चों के कारण बचपन की यारी आज जीवन भर के लिए प्यारे रिश्ते में बदल गई थी।

चलने से पहले बचपन की सहेलियाँ समधिन बन कर एक-दूसरे के गले लगी और फिर बोली..."कब के बिछड़े हुए हम आज कहाँ आके मिले....!"

अपना पराया

विजय और विनय बचपन के दोस्त थे। दोस्ती ऐसी कि अपनी पूरी पढ़ाई एक ही स्कूल-कॉलेज से पूरी की। बचपन से दोनों ने एक ही सपने को मिल कर जिया था कि दोनों मिल कर बिजनेस करेंगे, तो पढ़ाई पूरी करने के बाद नौकरी ढूँढने के बजाय दोनों ने मिल कर होटल खोलने का निर्णय किया।

मेहनती तो दोनों थे ही, तो मेहनत और पढ़ाई....दोनों ने मिल कर वो रंग जमाया कि होटल चल निकला। फिर दोनों ने अपने होटल की शृंखला बनाने पर विचार कर उस पर काम करना शुरू कर दिया। बिजनेस की तरह दोस्ती भी अटूट होती गयी। लोग उनकी दोस्ती की मिसाल दिया करते.. "कि दोस्त हों तो विजय- विनय जैसे और दोस्ती हो तो इनके जैसी, जो कभी टूट ही नहीं सकती।"

समय पर दोनों के विवाह हुए, बच्चे हुए, वे स्कूल जाने लगे और सब कुछ वैसे ही चलने लगा जैसे अब तक चलता आया था।

एक दिन विजय और विनय किसी काम से कहीं जा रहे थे। रास्ते में गन्ने के खेत और गन्ने बिकते दिखे तो दोनों को अपने बचपन के दिन याद आ गए कि कैसे वे खेत से एक गन्ना तोड़ कर उसके दो भाग करके खाया करते थे।

दोनों के मुँह से एक साथ निकला....."चल यार बच्चों के लिए एक गन्ना लेते हैं और बिलकुल उसी तरह दो भाग करके दोनों बच्चों को देंगे जैसे हम खाया करते थे।"

घर पहुँचते ही बच्चों को आवाज़ लगाई और विजय ने दो भाग करके दोनों बच्चों को देते हुए कहा... "खाओ और हमारा इतिहास दोहराओ बच्चों!"

विनय की आँखे अपने बच्चे को मिले गन्ने के भाग पर थी। जब उसने देखा कि उसके बच्चे को मिला गन्ने का भाग विजय के बच्चे को मिले भाग से छोटा था।

"अच्छा!... तो विजय ने जानबूझकर कर मेरे बेटे को छोटा भाग दिया गन्ने का। अपना बच्चा तो अपना ही होता है"....और बरसों की चली आ रही दोस्ती इस अपने- पराए के चलते बलि की भेंट चढ़ गई। लोगों ने, घरवालों ने लाख समझाया, पर अपने-पराए के शक ने जो जगह मन में बनाई वो बिजनेस का बँटवारा करवा कर ही रही। छोटी सी बात भी नासमझी में कितना कुछ तोड़ जाती है.....यह वो दोनों किसी के समझाने पर भी नहीं समझ पाए। आज दोनों एक-दूसरे के लिए अजनबी बन चुके हैं।

आत्मसम्मान

गौरी को देहरादून से लौटे हुए एक सप्ताह ही हुआ था कि पापा के फिर अस्पताल में भर्ती होने का समाचार मिला। वह फिर परेशान हो उठी। बड़ी मुश्किल से हैडमास्टर ने जाने की छुट्टी दी थी। जब पापा ठीक होकर घर आ गये थे तब एक सप्ताह रह कर वो वापस लौटी थी और स्कूल जाने लगी थी। अब फिर माँ का फोन आया।

गौरी सोचने लगी....जाना तो पड़ेगा ही। एक भाई देहरादून से बाहर है और दूसरा छोटा है, वो संभाल नहीं पायेगा। चलो पति आ जायें स्कूल से, तब मिल कर सोचेंगे....तब तक मैं चलने की तैयारी तो कर ही लेती हूँ।

पति स्कूल से लौटे तो गौरी ने फोन आने की बात बताई। तो वह भी वही बोले...."जाना तो पड़ेगा ही....मैं अभी थोड़ी देर बाद हैडमास्टर से बात करके आता हूँ।तुम तैयारी करो...कल सुबह ही निकलना होगा।"

जिसका अंदेसा था वही हुआ। हैडमास्टर ने छुट्टी देने से मना कर दिया था क्योंकि गौरी और उसके पति की साफगोई और खुशामद न करने की आदत के कारण दोनों ही उसकी आँख की किरकिरी बने हुए थे।

अपनी दोनों की छुट्टी की ऐप्लिकेशन रजिस्टर्ड डाक से भेज अपनी डेढ़ महीने की बेटी को ले वे देहरादून के लिए निकल लिए।

पूर्वानुमान तो था ही....और जब पंद्रह दिन बाद लौटे तो स्कूल पहुँचते ही स्थानांतरण के आदेश ने उनका स्वागत किया।बेहद इंटीरियर जगह चुनी थी हैडमास्टर ने ताकि ज्यादा से ज्यादा दिक्कतों का सामना करना पड़े।

साथी अध्यापकों ने बताया कि हमने बहुत समझाने की कोशिश की,पर उसका कहना है कि हम दोनों स्वयं जाकर प्रार्थना करें तो वह आदेश रुकवा सकते हैं। आपकी बेटी बहुत छोटी है, इसलिए कहने में कोई नुकसान नहीं है।

पति बोले...."अच्छी तरह सोच-विचार लो तुम। बेटी की परवरिश के लिए यहाँ की सुविधाएँ या हमारा आत्मसम्मान!"

"सोच लिया। हम दोनों साथ हैं तो कहीं भी,कैसी भी अच्छी-बुरी जगह और परिस्थिति में मिलकर बेटी का पालन-पोषण कर ही लेंगे.....लेकिन अपने आत्मसम्मान की बलि देकर सदा के लिए लिए अपनी दृष्टि झुका कर यहाँ की सुविधाओं में रहना मुझे नहीं, बल्कि हमें स्वीकार नहीं। हम आज से ही यहाँ से चलने की तैयारी आरंभ करेंगे।"

इस निर्णय के बाद चाय पीते हुए गौरी और उसके पति शिव बहुत हल्का अनुभव कर रहे थे।

अचानक

“कल ठीक चार बजे हम सब निकल रहे हैं माँ! तो अपना और पापा का बैग आप रात को ही लगा लेना। मैं और दीदी अपना लगा लेंगे”....कहता हुआ विभोर बाहर जाने को हुआ।

“पर ये तो बता जा कहाँ रहें हैं?”

“तुम बस तैयारी तो करो माँ! फिर कल देखते हैं किस ओर निकलेंगे”....कहते हुए विभोर अपने काम से बाहर निकल गया।

उधर किरण इसी उधेड़बुन में लगी रही कि आखिर ये बच्चे कर क्या रहे है? पति से भी पूछा तो कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिला तो सोचा...मैं सोच ही क्यों रही हूँ इतना, जहाँ भी जायेंगे पता तो चलेगा ही। और अगले दिन चारों सुबह अपनी कार से निकल पड़े।
खाते-पीते, बतियाते समय का पता ही न चला। दिल्ली पहुँचे, दिल्ली से आगरा... और एक होटल में जाकर रुके।

कुछ देर आराम करने के बाद निकले तो रुके जाकर ताजमहल पर।

अंदर पहुँच कर वहाँ बनी सफेद बेंच पर किरण और उदय को बैठा कर जब दोनों बच्चों ने......माँ! जन्मदिन की बहुत-बहुत बधाई!”....कहा तो किरण को समझ आया।

“हाँ माँ!.. जब आप छः महीने की थी तब नाना-नानी के साथ ताजमहल देखा था आपने। आप कहती थी कि मैं एक बार जरूर आगरा जाकर ताजमहल देखूँगी और उसी तरह बेंच पर बैठ फोटो भी खिंचवाऊँगी। तो बताइये... जन्मदिन का उपहार कैसा रहा माँ?”

“अभूतपूर्व! मैंने तो कभी सोचा भी न था कि ताजमहल देखूँगी और वो भी अपने जन्मदिन पर!”

“ये बच्चे! इतना याद रखते हैं मेरी कही बातों को।”

तीनों किरण की आँखों में खुशी की चमक को देख मंद-मंद मुस्कुराते आँखों-आँखों में इशारे कर रहे थे

अच्छा... तो उदय भी बच्चों की इस मिलीभगत में शामिल थे... सोचते हुए किरण अचानक मिले इस उपहार की खुशी को जीने में लीन हो गई।

अनोखा रक्षाबंधन

हर बार रक्षाबंधन का त्योहार सदा घर में नयी उमंग, नयी ऊर्जा और नयी खुशियाँ लेकर आता था। सत्यम बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करता।

पूर्वा ससुराल से उसे राखी बाँधने आती। पिता जी बुआ के घर राखी बँधवाने जाते।

पूर्वा जब राखी बाँधती तो उसे खिझाने में सत्यम को बहुत आनंद आता। मैं तो कुछ नहीं लाया उपहार तेरे लिए, पर चल राखी तो बाँध... कह कर हाथ आगे कर देता।

पर सत्यम हर बार देखता था कि रक्षाबंधन पर सब कुछ हँसी-खुशी से करते हुए माँ गुमसुम, उदास सी दिखायी देती थी। दोनों मामा के निधन के बाद जब भी रक्षाबंधन आता, तो उदासी उन्हें घेर लेती थी।

आज जब पूर्वा राखी बाँधने आई तो सत्यम ने माँ को आवाज दी... "माँ! पूर्वा आ गई।"

"आई बस"...हाथ पोंछते हुए माँ भी साथ बैठी।

जब पूर्वा राखी बाँध चुकी तो सत्यम ने जेब से राखी निकाली और कहा.... "माँ! मुझे राखी नहीं बँधोगी? आज से मैं तुम्हारा बेटा भी भी, भाई भी और पिता भी। जल्दी से राखी बाँधो और मिठाई खिलाओ। अब से मेरी माँ-दीदी रक्षाबंधन पर कभी उदास नहीं होगी".... कहते हुए सत्यम ने साड़ी आगे बढ़ाई

इस अनोखे रक्षाबंधन को देख माँ और पूर्वा दोनों की आँखों में खुशी के आँसू थे।

अपने हिस्से का काम

नाम तो मोहल्ले का अमन विहार था पर इसमें गलियाँ इतनी थीं कि हर गली की अपनी राजनीति चलती रहती थी। कोई राह चलते जिसे टकर जाता, वह गलियों का पुराण बाँचने से नहीं चूकता था। उस गली के लोग ऐसे, उस गली के ये करते है, उस गली के ये और उस गली वाले तो किसी को कुछ समझते ही नहीं आदि आदि।

आज अपनी गली में सब्जी बेचने वाला आया तो गली की अधिकतर महिलाएं सब्जी खरीदने निकल आईं और खरीद चुकने पर बातों में मशगूल हो गईं।

कुछ भी कहो.... हमारी गली में गंदगी बहुत है। वैसे चाहे जो भी कह लो, और गलियाँ इतनी साफ रहती हैं कि उनको देखने से ही जी खुश हो जाता है और एक हमारी गली है....जिसमें सफाई दिखती ही नहीं।

यह सुन कर अक्सर कम बोलने वाली बीना से चुप नहीं रहा गया। अब बात निकली ही है तो सुनो सब...और गलियों की, वहाँ रहने वाले लोगों की आप बुराइयाँ तो करने में लगे रहते हो, पर उनकी अच्छी बातों की तरफ भी तो देखो। वहाँ सभी अपने-अपने हिस्से का काम नियम से करते हैं और यहाँ सब यह सोचते है..मैं क्यों करूँ? जिस दिन यह सोच छोड़ कर हम सब अपने-अपने हिस्से का काम करने लगेंगे तो अपनी गली उनसे कहीं और अच्छी नज़र आएगी।

हाँ... बात में तुम्हारी दम तो है बीना। चलो...आज से ही इस पर अमल शुरू...कहते हुए सब अपने घर गईं और झाड़ू लेकर अपने -अपने घर के बाहर सफाई में जुट गईं। गली चमकने लगी थी।

चयन

“यार! तू उससे दिल्ली जाकर एक बार मिल तो सही। वारे-न्यारे हो जायेंगे तेरे। विधान सभा में है वो।कितने लिंक होंगे उसके ये कोई बताने वाली बात है! तेरे एक बार जाने की देर है बस। तू समझ ही नहीं रहा....।”

विनीत की बात सुन कर सोमेश बोला...”मेरे साथ पढ़ा हुआ है वो। दो साल साथ काम भी किया हमने। सब कुछ जानता है मेरे बारे में। करना होता तो अब तक कर चुका होता मेरे लिए। मैं काम माँगने नहीं जाऊँगा। अपने शहर, अपने लोगों के बीच रह कर ही काम करूँगा।”

फिर सोमेश ने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। अपने फोटोग्राफी के पैशन को अपना लक्ष्य बना कर जो काम मिला छोटा-बड़ा...उसे पूरी ईमानदारी से मन लगा कर अपना शत-प्रतिशत देते हुए किया।

तभी तो आज उसे और उसके काम को पहचान मिली। लोग ढूँढ-ढूँढ कर उसे मिलने और काम के प्रोजेक्ट देने आने लगे। युवा टीम उसके नेतृत्व में कई प्रोजेक्ट पर काम कर रही है।

शोहरत, प्रसिद्धि की ओर सोमेश के कदम बढ़ चले थे। सिफारिश और रिश्वत की बैसाखी न पकड़ कर अपने श्रम और ईमानदारी से काम करने का जो रास्ता सोमेश ने चयन किया था...आज उसी रास्ते ने उसे भरपूर आत्मसंतुष्टि और गर्व से जीने का अवसर प्रदान किया था। अब वह राष्ट्रीय फोटोग्राफर बन चुका था...अंतर्राष्ट्रीय उड़ान भरने की ओर कदम बढ़ रहे थे।

सहेली

शांति जिस कॉलोनी में रहती थी वहाँ का माहौल ऐसा था जहाँ महिलाओं में घर के काम करने के बाद ज्मघट्टा लगा कर, हाथ में ऊन सलाई लिए बातें करके समय काटने का हुनर ही था। पढ़ी-लिखी होने पर भी न चाहते भी शांति भी उसी रंग में रंग गई थी।पतियों के घर से निकलते ही फटाफट काम निबटा कर सब बैठ जाती और पूरी कॉलोनी की बहुओं, बेटियों,बेटों की जन्मपत्री बाँची जाती।

शांति के बेटे का विवाह हुआ। पढ़ी-लिखी, कामकाजी बहू घर आई। काम से घर लौटती तो बहू अपनी माँ की तरह उन्हें अपने दिन भर की बातें बताती और फिर पूछती..आप भी बताओ माँ, आपका आज का दिन कैसा रहा? क्या-क्या किया आपने?
मन ही मन शांति सोचती...कि इसे कैसे बताऊँ कि सारी मिलकर बुराइयाँ करने के अलावा कुछ नहीं करतीं।

छुट्टी होती तो बहू साथ फिल्म देखने ले जाती, बाजार में दोनों साथ खरीदारी करते, कभी मिलकर कोई नई डिश बनाते, साथ मिल कर टीवी देखते, कभी बहू अपनी पढ़ी हुई किताब की बातें सुनाती।

ये बदलाव शांति को भी मन ही मन भाने लगा। वह भी सोचती कि बहू के आने पर चाय पीते हुए आज वह उसे क्या-क्या बताएगी।

आज काम के लिए निकलते हुए बहू शांति के गले में बाँहें डालते हुए बोली..."माँ आप मेरा एक काम करोगी?"

"क्या"...

"मुझे अखबार पढ़ने का समय नहीं मिल पाता। आप तो पढ़ती ही हो, शाम को मेरे लौटने पर मेरे काम के समाचार चाय पीते समय आप मुझे बताया करोगी । ठीक है न माँ... मिलती हूँ शाम को।"

अब शांति को लगने लगा कि जैसे उसके पास समय ही नहीं है। जो करती उसे लगता कि बहू को बताती हूँ, कभी व्हाट्सअप पर मैसेज करती, कभी फ़ोटो खींच कर भेजती। शाम को दोनों अपनी दिन भर की बातें एक-दूसरे को बताते, वह अखबार में पढ़ी खबरें उसे सुनाती। उसे लगने लगा था कि बहू के रूप में उसे एक ऐसी सहेली मिल गई है जिसे वह कब से ढूँढ रही थी।

उसकी दुनिया में परिवर्तन की बयार बहने लगी थी और वह उसमें आनंद अनुभव करने लगी थी।

"अरे माँ... आजकल आपकी सहेलियाँ नज़र नहीं आती, न आप जाती हो..हुआ क्या आपको?"....हँसते हुए बेटा बोला

"हुआ कुछ नहीं ,बस मुझे एक मनचाही सहेली मिल गई है, जिसके साथ ने मेरा जीवन के प्रति नज़रिया बदल दिया है। अब मुझे अपनी सार्थक आध्यात्मिक उन्नति का सही रास्ता मिल गया है बेटा... जिसे मैं अभी तक समझ नहीं पाई थी।"

"अच्छा...कौन सी सहेली मिल गई आपको?"

"मेरे अपने ही घर में...मेरी बहू, जिसे कस्तूरी मृग की तरह मैं बाहर ढूँढ़ रही थी"....कहते हुए शांति मुस्कुराने लगी।

सलाह

आज कृति अपने बेटे को अपनी रुचि के वेब डिजाइनिंग के काम में आगे बढ़ते देख कर बहुत प्रसन्न थी। सोच का क्रम उसे अतीत में ले गया...जब एक दिन बेटा परेशान सा बैठा था। लगता था जैसे कुछ गंभीर सी बात उसके मन में चल रही है।

उसने चाय बनाई और दो कप चाय लेकर उसके पास बैठी। इधर-उधर की बात करते हुए उसने बेटे से पूछा...."और बताओ तुम्हारा बिजनेस कैसा चल रहा है?"

"माँ, ये तो बस जितना चल रहा है, उससे थोड़ा ही कुछ और अच्छा होगा। पर मेरा जितना समय इसमें लगता है उतने में तो मैं अपनी रुचि का काम कर बहुत आगे निकल सकता हूँ। पर मैं कोई निर्णय नही ले पा रहा हूँ। चलते काम को कैसे छोड़ूँ? नया करूँगा तो कब गति पकड़ेगा...बड़ी दुविधा में हूँ माँ।"

"बस इतनी सी बात! मैं तेरी दुविधा समझ रही हूँ बेटा। तू मेरी सलाह मान। कल से तू अपने आफिस का शटर नहीं खोलेगा। जो तू करना चाहता है...उसकी योजना बना। यहाँ रह कर शुरू होगा तो यहीं और बाहर जाना पड़े तो बाहर जाकर कर। ये पहला काम खतम। कल से क्यों...तू आज से, बल्कि अभी से अपनी योजना बनाने में लग जा।"

"सच माँ.... लोग क्या कहेंगे कि मैं एक चलते हुए काम को छोड़ कर खतरा मोल रहा हूँ।"

"इसकी चिंता छोड़,.तुझे जो करना है बस उसके बारे में सोच और लग जा अभी से।"

फिर बेटे ने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। आज वेब डिजाइनिंग में वह एक जाना -पहचाना नाम बन चुका है। उसकी उन्नति देख कर कितना गर्व महसूस होता है।

माँ की सलाह पर विश्वास कर उसने जो आगे कदम बढ़ाया था...वह फिर रुका नहीं। कॉलबेल बजी.... तब जैसे वह अतीत से वर्तमान में लौट आई।

पाठशाला

कई दिनों से सासू माँ गौरा को अपनी सहेली के यहाँ चलने को कह रही थी, तो गौरा ने आवाज़ लगाई....माँ! फटाफट तैयार हो जाइए। हम चल रहे हैं मोहिनी काकी के यहाँ।

अच्छा... तो मैं आई अभी तैयार होकर.... कहती हुई सासू माँ तैयार होने अपने कमरे में गई।

थोड़ी देर में दोनों सास-बहू मोहिनी के घर जा पहुँची। दोनों सहेलियाँ गले मिल, इतने दिनों बाद आने की शिकायतें कर अपनी गप्पों की पोटली खोल कर बैठ गई। मोहिनी के बहू- बेटे भी आकर बैठे, पर उनका दो साल का शैतान बेटा उन्हें चैन ही नहीं लेने देता था। उसे संभालना ही एक बहुत बड़ा काम था।

इसी बीच चाय आ गई। चाय के साथ रखे नाश्ते को उनका बेटा बार-बार झूठे हाथों से लिए जा रहा रहा था। सब लेने को बोलते, पर गौरा और उसकी सासू माँ हाँ-हूँ करते लेना टालती रही।

"अच्छा सुशीला मौसी और गौरा भाभी!

आप कोई अच्छा सा स्कूल बताइए ना जहाँ हम अपने गोलू को डालें। पढ़ाई अच्छी होती हो, मोरल्स यानी संस्कार भी मिलें और आगे चल कर तथाकथित अच्छे-बड़े स्कूल में भी जा सके।"

"हाँ-हाँ सोच कर और पता करके बताऊँगी जरूर"....कह कर गौरा तो और बातों में लग गई, पर सुशीला से रहा नहीं गया।

"देख विकी.... अच्छे स्कूल तो बहुत हैं, इतनी चिंता क्यों कर रहा अभी से तू? पर बुरा न मानना बेटा,स्कूल भेजने से पहले जिस पाठशाला में छुटपन से संस्कार दिए जाते हैं वहाँ तो तूने इसे भेजा ही नहीं बेटा!"

"मैं कुछ समझा नहीं मौसी! आप समझा कर कहो न।"

"कहना तो पड़ेगा ही बेटा! नहीं तो तू और बहू दोनों समझोगे कैसे? जब-जब यहाँ आई हूँ बेटा तो मैंने यही देखा कि गोलू जो भी करे तुम दोनों उसे रोकते तक नहीं।वो गालियाँ भी देता है, घर में सबके नाम लेता है, जिद करता है, मेहमानों के आगे रखे खाने-नाश्ते में झूठे हाथ डालता रहता है।पर कोई इसे रोकता-समझाता नहीं। बेटा बच्चे को संस्कार अपने घर रूपी पाठशाला से, अपने माता-पिता से मिलते हैं, पर इस पाठशाला में तो तुम दोनों ने इसे कुछ सिखाया ही नहीं, कोई संस्कार नहीं दिए तो इस जिद्दी बच्चे को कोई स्कूल कैसे कुछ सिखाएगा?

वहाँ तो सब पराये होंगे। यहाँ तो अपनों ने ही कुछ सिखाया नहीं अब तक। मैं कुछ गलत कह रही हूँ बेटा....सोच कर देखो।”

“मौसी!.....इस नज़रिए से तो हमने कभी सोचा ही नहीं। हम कहाँ गलती कर रहे थे कभी समझने की कोशिश ही नहीं की ।”

“देखो... जब बच्चा छोटा होता है तो अपने बच्चे का सही-गलत किया सब अच्छा लगता है पर बड़े होने पर वही बातें शर्मिंदगी का कारण बनती हैं।क्या तुम ऐसे दौर से गुजरना चाहोगे....नहीं ना। तो आज से ही तुम दोनों इस पाठशाला के शिक्षक बन कर इसे स्कूल भेजने से पहले संस्कारित करो....समझे तुम दोनों?”... कहते हुए.....”अरे इतनी देर हो गई। चल गौरा! सब इंतज़ार कर रहे होंगे हमारी”....कह कर चलने को हुई।

फिर कब आओगी मौसी? जल्दी ही, बस तुम पाठशाला में पढ़ाना आज से ही.... कहते हुए गौरा और सुशीला हँसते हुए चल पड़ी।

लूडो

घर के अंदर आते ही धरा ने जैसे पूरा घर ही सिर पर उठा लिया।

“पापा! आप फटाफट पैंट पहनो और चलो मेरे साथ। पंद्रह-बीस मिनट में वापस आ जायेंगे, तब आकर चाय पियेंगे।”

“अरे! छोड़ न धरा! कहाँ जायेगी? अभी तो आयी है, आराम से बैठ। मैं चाय बनाती हूँ”....कहते हुए धरा की मम्मी चाय बनाने उठी।

“आप कहाँ चली, बैठो आराम से। पापा! आप कहाँ मम्मी की बातों में आ रहें हैं। चलो बस, अभी आते हैं मम्मी और आकर चाय बना कर आपको पिलाते हैं”....कहते हुए धरा पापा को लगभग खींचते हुए ही ले गयी। लौटी तो उसके हाथ में लूडो था।

चाय पीकर जब तीनों खेलने बैठे और पापा के तीन बार छह नंबर आने पर धरा ने जोर से आपकी चाल तो गल्लम!...सुन कर और उसके पापा का उतरा मुँह देख कर मम्मी की हँसी तो रोके नहीं रुक रही थी।

इतने दिनों बाद मम्मी को खुल कर हँसते देख धरा को महसूस हुआ उसका लूडो लाना सार्थक हो गया था।

मिटते फासले

देवलोक कॉलोनी में बसे हुए सुमेध को कई वर्ष हो गए थे। कहने को देवलोक कॉलोनी थी, पर लगता था कि जैसे किसी महानगर में रह रहें हों।किसी विवाह, मुंडन,जन्मदिन समारोह में मिलते तो हाथ जोड़ राम-राम हो जाती बस।कॉलोनी का हर व्यक्ति एक-दूसरे को जाने-पहचाने, मिलें-जुलें....ऐसी कोई इच्छा सुमेध को किसी में नज़र नहीं आती थी।

यही बात फाँस की तरह चुभती रहती सुमेध के मन में। एक और बात जो सुमेध हर समय सोचता रहता वो ये कि समाज के निर्धन और वंचित वर्ग के लोगों-बच्चों के लिए समाज के सहयोग से ही सेवा कार्य किया जाए.... पर कैसे?

सोचते रहने से कुछ नहीं होने वाला...और वह घर से एक निर्णय कर निकल पड़ा। अपनी कॉलोनी के हर घर में जाकर सुमेध ने अपने विचार से लोगों को अवगत कराया कि हर परिवार महीने में एक बार एक किलो आटा या चावल देगा तो उससे आश्रम-अनाथलयों में रहने वाले बच्चों, दिव्यांग बच्चों और महिलाओं के लिए खुशी देने का कारण बन सकता है, अपने जन्मदिन उनके साथ मना कर थोड़ी देर के लिए ही सही, परिवार की अनुभूति उन्हें करवा सकता है।

मिलते रहने से लोगों को बात समझ में आने लगी। सब चर्चा करने लगे। मिलते तो पूछते...कब शुरू कर रहें हैं सुमेध जी? हम तो इंतज़ार में हैं।

और एक दिन निश्चित कर सुमेध घर से निकले। हर घर से अनाज लेकर रखा।अगले दिन कॉलोनी के दो-चार लोगों को साथ लेकर निस्वार्थ भाव से निर्धन बच्चों के लिए काम करने वाली संस्था को देकर आए।

अब कॉलोनी के लोगों को एक अच्छा उद्देश्य चर्चा करने और मिलने के लिए मिल गया था तो सब एक- दूसरे से मिलने लगे।एक सार्थक उद्देश्य ने लोगों को अपने मैं से निकल कर दूसरों के लिए सोचने की एक दिशा सुमेध के माध्यम से प्रदान कर दी थी जिसने लोगों के बीच अजनबीपन के फासले कब दूर कर दिए थे,.. ये कॉलोनी के लोगों को भी पता नहीं चल पाया था।

रंग

पहले माँ और डेढ़ महीने के अंतराल पर पिता...दोनों का साथ क्या छूटा, बिल्कुल अकेली पड़ गई थी मोहिनी।

अपने मन की किसी से कह न पाती। मायका भी काट खाने को दौड़ता था।

मायके जाती तो ताला खोल कर बैचैन सी हो जाती थी। उनको खोने के दुख से वह उबर ही नहीं पा रही थी। ऐसे ही दिन पर दिन बीतते जा रहे थे।

एक दिन कोई कागज खोजने के लिए पिता की किताबों वाली अलमारी खोली तो उसे अपनी एक कॉपी दिखी जिसमें उसने कई सारी रेसिपियाँ कॉपी करके लिखी हुई थी।

उसे जैसे कंधे पर एक स्पर्श का अहसास हुआ। लगा कि माँ-पिता सामने आ गए।

“अच्छा...समझ गए हम.. आज तुम कुछ नया बना कर खिलाने वाली हो हमें। तभी तो कॉपी में इतनी तल्लीनता से देखने में लगी हो।”

“नहीं माँ! अब मन नहीं होता कुछ भी नया बनाने का। आप जो छोड़कर चले गए मुझे।”

“बता किसने कहा हम तुझे छोड़ कर चले गए? पर तू इस तरह अपने काम छोड़ कर दुखी ही होती रहेगी तो कैसे काम चलेगा बता। कितना शौक है तुझे खाने में नए नए प्रयोग करने का। बेटी..तेरे अंदर प्रतिभा है और तू उसमें जंग लगा रही है। कुछ सोच, कुछ कर, नहीं तो हम भी....।”

मोहिनी समझ नहीं पा रही थी। उसे लगा माँ-पिता सही ही तो कह रहे हैं। अपने को संभालना तो पड़ेगा। उस ने जैसे उसे दिशा संकेत दे दिया था। उसने अपने को समेट कर घर में खाने में नए नए प्रयोग करना शुरु किया। पति-बच्चे सराहते तो उत्साह में और नया करने का सोचती। एक दिन गृहशोभा में अपनी भेजी रेसिपी को प्रकाशित देख कर जो उत्साह मन में जगा.. वह रुका नहीं फिर। पत्रिकाओं, समाचार पत्रों में उसकी रेसिपियाँ प्रकाशित होने लगी। उसने अपने आस-पड़ोस के बच्चों को, जिसमें लड़कियाँ ओर लड़के दोनों थे, कुकिंग क्लासेज लेकर सिखाने लगी।

जब भी नया कुछ करती, माँ-पिता को धन्यवाद कहना न भूलती। रास्ता उन्हीं ने ही तो दिखाया था। उस पर चल कर जो "साधना" उसने शुरू की थी, उसने अपना रंग दिखाना आरंभ कर दिया था। दुख, उदासी के बादल छँट गए थे। नए-नए रंग आँगन में झिलमिला रहे थे।

असली श्राद्ध

बहुत दिनों से मनो-मस्तिष्क में चलने वाले विचारों के प्रवाह को आज ध्वन्या ने एक किनारा प्रदान किया था।

श्राद्ध की पूजा सम्पन्न होते ही ध्वन्या अपने पिता की पुस्तक, जो उसने एक सप्ताह पूर्व छपवाई थी, लेकर आई और पंडित जी के सामने रखी।

पंडित जी! पूजा करके आप इस पुस्तक का अपने हाथों विमोचन कर दीजिये। मेरे पिता की आत्मा उनके लेखन में बसती थी। आज अपनी इस प्रकाशित पुस्तक को देख कर उनकी आत्मा अवश्य संतुष्ट और तृप्त होगी।

पूजा के बाद जब पंडित जी ने पुस्तक तस्वीर के पास रखी, तो उसे लगा जैसे पिता उसे आशीर्वाद देते हुए कह रहे हों... मेरा असली श्राद्ध तो आज हुआ है।

हिंदी डे

"देखो भई! क्या अॉर्डर आया है इस बार! स्कूल में हिंदी डे सेलिब्रेट किया जायेगा।" बड़ी मुसीबत हो गई ये तो। कहते है सरकार से आया है यह डे मनाने का अॉर्डर। ऊपर से यह और लिखा है प्रिन्सिपल ने.... हिंदी मैडम से हेल्प लीजिये।"

"मैं तो उससे कुछ पूछने वाली नहीं। इतना लंबा बतायेगी कि बोर ही कर डालेगी"....कहते हुए मिसेज़ डालमिया इठला कर बोली।

तब तक मिसेज़ सिंह बोली...."करना क्या है इसमें जो हम हिंदी वाली से हेल्प लें!"

"अरे! अपनी-अपनी क्लास के दो-चार बच्चों को कुछ सलोगंस याद करवा दो... लाइक.... हिंदी माई मदर, हिंदी माई लाइफ, हिंदी माई प्राउड सो सो... बाकी वो हिंदी वाली है तो करवाने के लिए।"

"और हाँ.... तुम एक-पोयम इंग्लिश में लिख कर लर्न करवा देना।"

"डन! चलो, तैयारी करवा देते हैं। परसों तो हिंदी डे सेलिब्रेट होना ही है"....कहते हुए सबकी सब तैयारी करवाने अपनी-अपनी क्लास में चली गई।

आरंभ

किसी काम से पड़ोसिन के घर गई तो देखा उसकी बेटी शुभी आई हुई थी। बैठो-बैठो कहने पर बैठ गई और उनकी गप्पों में शामिल हो गई।
इधर-उधर की होते-होते बातें बच्चों पर आ टिकी।

शुभी हँसते हुए बताने लगी--"आंटी! गोलू इतना शैतान हो गया है कि दादी को कहता है आपको कुछ अच्छा खाना बनाना नहीं आता, आप ऐसा करती हैं, वैसा करती हैं...पर मेरी नानी तो बहुत अच्छी है, वो मेरे लिए यह बनाती है, अच्छी बात सिखाती है आदि-आदि।"

मैंने बीच में टोका..."तब तो दादी को बुरा लगता होगा शुभी!"

"अब इसमें मैं क्या करूँ आंटी? हम तो इसे सिखाते नहीं। यह खुद ही जो देखता है बोलता है।"

"पर शुभी जरा सोच कर देखो...यदि गोलू इस बात का उल्टा कर दे कभी तो...यानी दादी के लिए ऐसा न कह कर नानी के लिए कहे, या थोड़ा और बड़ा होने पर अपने किसी मित्र के माता-पिता से तुम्हारी तुलना करते हुए तुम्हारे बारे में ऐसा कहे...क्या तब भी तुम ऐसा ही सोचोगी, ऐसा ही कहोगी?"

“देखो शुभी! शिक्षा वही नहीं है जिसे पाने के लिए हम अपने बच्चों को विद्यालय भेजते है, बल्कि घर ही सबसे पहला विद्यालय है जहाँ बच्चा सही-गलत की समझ, अच्छे-बुरे संस्कार सीखता है। तो बताओ...क्या ये हमारा कर्तव्य नहीं है शुभी कि हम अपने बच्चों को सही शिक्षा प्रदान करें?”

“आप सही कह रही हैं आंटी। मेरा सोचना गलत था। अब मुझसे ऐसी भूल न होगी।”

“तो आरंभ आज से ही करना शुभी”....कहते हुए मैं खुशी से घर लौट आई।

शोर

जब से गौतम का बेटा हुआ तब से मानो उसके पैर जमीन पर नहीं थे। नीला के साथ बैठ कर वह योजना बनाता रहता कि क्या-क्या करेंगे, कैसे करेंगे, कब करेंगे। दोनों उत्साहित होकर घंटों-घंटों बात करते रहते।

सुबह हुई तो नीला ने कहा....”गौतम! माँ-बाबू जी से भी पूछ लो इस विषय में।”

माँ कमरे में आयी तो गौतम बोला...”माँ! सब यार-दोस्त और ऑफ़िस वाले पार्टी माँग रहें हैं, हमने ऐसा-ऐसा सोचा है। आप और बाबू जी भी अपना विचार बताएँ।”

“बेटा! इतनी जल्दी भी क्या है? मुन्ने को थोड़ा बड़ा हो जाने दो। उसके बाद, फिर सोचेंगे।”

बस गौतम का तो जैसे सब्र का बाँध ही टूट गया। “मुझे पता था माँ! आप नहीं मानने वाली। हमारी बात न मानना, मतभेद रखना तो जैसे आपने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया है।”

“नहीं बेटा! ऐसी बात नहीं है....गौतम को समझाते हुए माँ बोली। माँ हूँ मैं तुम्हारी। जीवन का अनुभव हमें तुमसे अधिक है। तुम क्या जानो! नवजात तो पानी के बुलबुले के समान होता है। उसके होने का शोर नहीं मचाया जाता। थोड़ा बड़ा हो जाए मुन्ना! फिर करेंगे धूमधाम से पार्टी और सबको बुलायेंगे। बड़े होने के नाते तुम दोनों को ये समझाना मेरा कर्तव्य था बेटा!”

“आप ठीक कह रही हो माँ",...कहते हुए गौतम सोच रहा था कि घर में बड़ों का रहना कितना आवश्यक है।

विस्फोट

गौरी अपनी ससुराल के शक्की वातावरण में रहते हुए थक चुकी थी। किसी से भी बात करने की मनाही, कहीं बाहर जाने की आज्ञा नहीं, देवरानी-जिठानी के साथ मिल कर बैठना नहीं, बस घर में रहो, खाना बनाओ और बच्चे पालो....और रात में शराबी पति की गालियाँ और मारपीट सहो।

हद तो तब हो गई जब वो एक-दो घंटे के लिए अपने मायके माँ-पिता जी से मिलने गई। चलने के समय तेज बारिश होने लगी, तो सबने रोक लिया कि जब तक बारिश रुकेगी तब तक खाना भी बन जायेगा। तो खाना खाकर ही जाना।

गौरी ने घर पर फोन करके बता दिया कि सब ज़िद कर रहें हैं तो वो खाना खाकर जल्दी ही घर लौट आएगी।

पर ये क्या.....घर पहुँचते ही उस पर आरोपों की बौछार होने लगी।

“आ गई मेमसाहब मायके की पार्टी जीम कर। यहाँ घर वाले भूखे मर जाएँ सब...जाने कहाँ-कहाँ किसके साथ मौज-मस्ती करके आई है।”

वह चुपचाप खाना बनाने में लग गई। जानती थी कि जल्दी कोई चुप होने वाला नहीं है। खाना बना कर, प्लेटों में लगा कर सबके सामने रखा.... पर सास-ससुर,पति किसी ने खाने में हाथ तक नही लगाया। बच्चे भी पिटने के डर से चुप बैठे थे।

अब तो गौरी के सब्र का जैसे बाँध टूट गया। चिल्लाते हुए वो बोली...”खाना है तो खाओ, बोलना है तो बोलो, मुझे अब फ़र्क पड़ने वाला नहीं। मेरे चरित्र पर उंगली उठाते हो, जबकि जानते हो अच्छी तरह कि मैं कहाँ गई थी और देर होगी, ये भी फोन करके बताया था। बहुत सह लिया तुम सबको। अब कान खोल कर सुन लो....जब भी ठीक समझूँगी, मैं मायके ही नहीं, जहाँ भी ज़रूरत होगी,जाऊँगी। अपने रास्ते पर सही हूँ... तो क्यों तुम सबसे डरूँ? गलत तुम सब हो... ठीक करो अपने को, तब मुझे कुछ बोलने-कहने की हिम्मत करना।”

यह कहते हुए गौरी रसोई समेटने चली गई। सबने धीरे-धीरे खाना शुरू कर दिया था। आज गौरी अपने को बहुत हल्का महसूस कर रही थी।

बचत

श्यामा अपने जुड़वाँ आठ वर्ष के पोती-पोते को लेकर बहुत परेशान थी। बेटा-बहु दोनों नौकरी करते करते थे। जेब खर्च के नाम पर दोनों बच्चों को जरूरत से ज्यादा पैसे देते और वे अनाप-शनाप खर्च करते, जंक फूड इतना खाते कि घर में फिर खाना ही नहीं खाते। आए दिन दोनों का पेट खराब होता और फिर अस्पताल की भागदौड़ होती। ये आए दिन का काम था। श्यामा कुछ कहना चाहती तो कोई सुनने को ही तैयार नहीं होता था।

अब कल की ही बात लो... दोनों बच्चों ने जिद ठान ली कि वे पड़ोस के अपने दोस्त के जन्मदिन पर नई ड्रेस ही पहन कर जाएँगे और महँगा वाला गिफ़्ट लेकर जाएँगे। अपनी जिद मनवा कर ही दोनों वहाँ गए।

बस एक अच्छी बात होती थी कि वे सोने से पहले दादी से कहानी जरूर सुनते थे और इन्हीं कहानियों के माध्यम से श्यामा उन्हें कुछ समझाने-सिखाने की कोशिश किया करती थी।

आज दोनों बच्चों का जन्मदिन था। इस बार बहुत सोच-समझ कर वे दोनों के लिए उपहार खरीद कर लाई थीं। पार्टी समाप्त होने के बाद दोनों अपने उपहारों को देखने बैठे। सब देख चुकने के बाद दोनों चिल्लाए...."दादी! दादी! आपका गिफ़्ट कहाँ है? आप तो कुछ लाई ही नहीं क्या हमारे लिए?"

"ऐसा हो सकता है कि दादी अपने लाड़लों के लिए कोई गिफ़्ट ना लाए। ये लो और खोल कर देखो।"

दोनों ने खोला.... "देखते ही बोले......गुल्लक? ये किसलिए दादी?"

"तुम मेरी कल सुनाई हुई कहानी भूल गए क्या? इसमें तुम अपने जेब ख़र्च के मिलने वाले पैसों में से थोड़े-थोड़े बचा कर इसमें डालते रहोगे। तब मोहन और सोहनी जैसे कितने ग़रीब बच्चे हैं जो ग़रीबी के कारण पढ़ाई से वंचित रह जाते हैं। तुम दोनों अपनी बचत के पैसों से ऐसे बच्चों की मदद कर उन्हें वो ख़ुशियाँ दे सकते हो जो उन्हें मिल नहीं पाती। बोलो करोगे ऐसा?"

"आपने पहले क्यों नहीं बताया दादी?"

दोनों दौड़ कर अपने कमरे में गए और हाथ में पकड़े नोट अपनी-अपनी गुल्लक में डालते हुए बोले....."ये रही हमारी आज आज की बचत दादी! आपका गिफ़्ट तो नंबर वन रहा दादी।"

श्यामा की चिंता दूर हो गई थी। अब वह आज सुनाने वाली कहानी के बारे में सोचने लगी।

जन्मदिन

पूरे घर में जैसे हलचल मची हुई थी। सब इधर से उधर कुछ न कुछ करने में लगे हुए थे।

हलचल मचती भी क्यों न? जब से गीता की नौकरी लगी थी तब से वह अपने किसी भी जन्मदिन पर घर नहीं आई थी। अगले वर्ष उसका विवाह होने वाला था। तो दोनों भाइयों ने उसे इस बार छुट्टी लेकर घर आने को मना लिया लिया था, ताकि इस बार अपने मन के अनुसार धमाचौकड़ी मचा सकें सब मिलकर।

"देखो! लेने कोई नहीं जायेगा बस स्टैंड। जैसे ही उसका ऑटो आकर रुकेगा, पापा जायेंगे बाहर गेट पर। घर के अंदर आते ही हमारी योजना का श्रीगणेश होगा। समझ गये न पापा आप! क्योंकि आप ठहरे भोले भंडारी! सारी गुप्त योजनाओं का गुड़गोबर कर डालते हैं।"

"अरे भाई! तुम लोग निश्चिंत रहो। मैं कुछ गड़बड़ करने वाला नहीं।"

फिर जैसे ही ऑटो आया आया गीता के पापा बाहर पहुँचे। "आ गई बेटी!"...कहते हुए, सिर पर आशीष का हाथ रख अंदर लाये। घर के अंदर आते ही दोनों भाइयों ने गुलाब की पुष्प वर्षा की, तो माँ ने हलवा खिला कर मुँह मीठा करवाया।

चाय पीते-पीते माँ ने प्यारा सा सूट और साड़ी, दोनों छोटे भाइयों ने पर्स, बैग, डायरी,पैन देकर कहा... "यह तो अभी आधा ही हुआ है, अभी तो और चलता रहेगा।"

सबसे अंत में पापा ने गीता को एक पैकेट दिया। खोल कर देखा तो उसमें उसका प्रिय उपन्यास धर्मवीर भारती का गुनाहों का देवता, टूटी छूटी कड़ियाँ बच्चन की किताब, मुझे चाँद चाहिए... सुरेन्द्र वर्मा का उपन्यास और भगवद गीता थी।

पापा ने सिर पर हाथ फेरते हुए कहा... "बेटी! पुस्तकों से अच्छा कोई मित्र नहीं, हिंदी की जो पुस्तकें तुम पढ़ना चाहती थी वो मैं तुम्हारे लिए लाया और ये भगवद गीता... जिसमें ज्ञान का सारा निचोड़ है... ये जीवन में तुम्हें हर समय मार्ग दिखायेगी। मैं तो सदा नहीं रहूँगा न! पर ये पुस्तकें सदा तुम्हारी मित्र रहेंगी"....कहते हुए भावुक हो गये।

गीता सोच रही थी... जन्मदिन का ऐसा उपहार तो उसके हिंदी के लिए जीने-मरने वाले पापा ही दे सकते हैं, दूसरा कोई नहीं।

नयी पहचान

बेटी जब मायके आती तो इधर -उधर की बहुत सी बातें करने के बाद अपनी रौ में शुरू हो जाती।

"माँ! तुमने अपनी अलमारी का क्या हाल बना रखा है? उस दिन मैं सब ठीक करके गई थी। तुमने फिर वैसा ही कर दिया।"

"और ये डिब्बा खाली क्यों? बिंदी के सब पत्ते, नेलपॉलिश, हेयर बैंड कहाँ गये? पता है मुझे सब इधर-उधर रखे होंगे तुमने!"

"अपनी मेज देखी तुमने? सब किताबें एक के ऊपर एक। जब पढ़ना चाहोगी कोई तो ढूँढोगी कैसे?"

माँ हँसती जाती और बेटी कहती जाती

"अब हँस कर मेरी बात को उड़ाओ मत"

अब थोड़ी देर में बेटी आने वाली थी। माँ तैयार थी उससे सब सुनने के लिए। बेटी आई। थोड़ी देर बैठी।

"माँ! तुम बैठो, चाय मैं बना कर लाती हूँ।"

"अरे! माँ! सारे कपड़े कहाँ गये? एक भी नहीं मिल रहा पकड़ने के लिए।"

"लो, पहले चाय पियो तुम।"

"अब ये वाला सूट पहनना छोड़ो माँ! नये जो सिलवाये हैं उन्हें कब निकालोगी? तुम भी मेरी कोई बात मानती नहीं हो।"

"हाँ! हाँ... जब अगली बार आयेगी न तब नया वाला सूट पहने ही मिलूँगी, चैन से चाय तो पाई ले"... कहते हुए माँ हँसने लगी।

"सदा हँस कर मेरी बात यूँ ही टाल देती हो। देखूँगी अगली बार, क्या करके रखोगी।"

बेटी की बातें सुनते हुए माँ सोच रही थी कि हर बेटी विवाह के बाद अपने घर जाकर नयी पहचान करते हुए उसमें इतना रच-बस जाती है कि नये को अपनाने में उसकी सारी पुरानी आदतें बदल जाती हैं। फिर जब- जब वो मायके आती है तो नयी और पुरानी पहचान के बीच ऐसे ही जीती है

वह भी तो इसी तरह माँ की नाक में दम कर देती थी, आज बेटी कर रही है....सोचते हुए माँ मन ही मन बेटी को देख कर मंद-मंद मुस्कुराने लगी।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम	- डॉ.भारती वर्मा बौड़ाई
माँ	- श्रीमती कमला वर्मा
पिता	- बाबूराम वर्मा
जन्म स्थान	- देहरादून (उत्तराखण्ड)
जन्मतिथि	- 04 अक्टूबर 1957
शैक्षिक योग्यता	- एम.ए. (हिन्दी साहित्य), बी.एड., डी.फिल.(शोध द्वारा - गद्यकार बच्चन : एक आलोचनात्मक अध्ययन)
जीवन संगी	- श्री राकेश आनंद बौड़ाई
संतान	- दो (एक आत्मजा, एक आत्मज)
व्यवसाय	- 24 वर्ष तक अरुणाचल प्रदेश के शिक्षा विभाग में अध्यापन। अक्टूबर 2005 मे स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली।
संप्रति	- स्वतंत्र अध्ययन और लेखन
निवास स्थान	- ''प्राच्य शिखर'' 95, दिव्य विहार, डांडा धर्मपुर, डाकघर - नेहरुग्राम, देहरादुन उत्तराखण्ड, पिन - 248001
फोन नं.	- 9759252537
मेल आई.डी.	- bharati.bourai007@gmail.com
प्रकाशित एकल पुस्तकें	- (1) कविता का अरुणांचल (कविता संग्रह) 1985 (2) बच्चन साहित्य : अध्ययन का उपक्रम (आलोचना) 1998 (3) सृजन समीक्षा 2018 (4) उपहार (काव्य संग्रह) (5) रंगों के साथ (काव्य संग्रह) (6) अंतर्मन की यात्राएँ (काव्य संग्रह) (7) आखर मीत (काव्य संग्रह)
प्रकाशित साक्षा संग्रह	- 18 साझा संग्रहों में रचनाएँ प्रकाशित
पत्र पत्रिकाएं	- लगभग 70 पत्र-पत्रिकाओं, ई पत्रिका, ब्लॉग में रचनाएँ प्रकाशित
सम्मान	- वाणिज्य मंत्री (वर्तमान रक्षा मंत्री) निर्मला सीतारमण सहित विभिन्न संस्थाओं, प्रकाशनों द्वारा लगभग 12 सम्मानों से सम्मानित
सामाजिक क्षेत्र	- अपने पति के ''अविराम प्रवाह ट्रस्ट'' द्वारा किए जा रहे सेवा कार्यों में सहयोग।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-93-86666-11-6

मूल्य- 55/-